परक्राम्य लिखित अधिनियम 1881 की धारा 138 का मामलों की पुनः शीघ्र सुनवाई में।

(स्वतः संज्ञान रिट याचिका (सी.आर.एल.) 2020 की संख्या 2)

दिनांक: 16 अप्रैल, 2021

(एस.ए.बोबडे, सी.जे.आई., एल.नागेश्वर राव, बी.आर.गवई, ए.एस.बोपन्ना, एस.रविन्द्र भट्ट, जे.जे.)

न्यायालय द्वारा निम्नलिखित आदेश पारित किया गया-

आदेश

1. विशेष अनुमति याचिका (आपराधिक) संख्या 5464 वर्ष 2016 दिनांक 27.01.2005 को दो चेकों राशि 1,70,000 के अनादरण से संबंधित है जिसका विवाद पिछले 16 वर्षों से लम्बित हैं परक्राम्य लिखित अधिनियम की धारा 138 (इसके बाद अधिनियम) के तहत काफी संख्या में दाखिल मामले विभिन्न स्तरों पर लंबित हैं इस न्यायालय की एक डिवीजन बेंच जिसमें दो में स्वयं (भारत के मुख्य न्यायाधीश और एल.नागेश्वर राव, जे.) ने जॉच करने का निर्णय लिया है कि इन मामलों के निपटारे में देरी के क्या कारण हैं? एन.आई. एक्ट 1881 की धारा 181 के अन्तर्गत मामलों की शीघ्र सुनवाई कैप्शन के रुप में रजिस्ट्री को स्वतः संज्ञान रिट याचिका दर्ज करने का निर्देश दिया गया था। श्री सिद्धार्थ लूथरा, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता को एमिकस क्यूरी नियुक्त किया गया और विद्वान अधिवक्ता के.परमेश्वर से उनकी सहायक करने का अनुरोध किया गया। भारत संघ, सभी उच्च न्यायालय के रजिस्ट्रार जनरल, राज्यों के पुलिस महानिदेशक और केन्द्र शासित प्रदेश, राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकार के सदस्य सचिव, भारतीय रिजर्व बैंक और भारतीय बैंक एसोसिएशन, मुंबई बैंकिंग के प्रतिनिधि के रूप में संस्थओं को नोटिस निर्गत किया गया।

2. विद्वान एमीसी क्यूरी ने दिनांक 11.10.2020 को एक प्रारंभिक रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसकी प्रति सभी उत्तरदातओं को प्रदान की गई। दिनांक 19.01.2021 को विद्वान एमीसी क्यूरी ने इस न्यायालय को सूचित किया कि 25 उच्च न्यायालयों में से केवल 14 ने प्रारंभिक रिपोर्ट पर अपनी प्रतिक्रियाएँ प्रस्तुत की थीं। भारतीय रिजर्व बैंक ने भी अपने सुझाव दाखिल किये थे। सात पुलिस महानिदेशकों ने प्रारंभिक रिपोर्ट पर अपने विचार रखते हुए अपने हलफनामे दाखिल किए थे। जिन पक्षों ने अपना जवाब दाखिल नहीं किया था, उन्हें अतिरिक्त समय दिया गया

और मामले को अंतिम निपटारा के लिए 24.02.2021 को सूचीबद्ध किया गया। सुनवाई के दौरान, भारत के मुख्य न्यायाधीश, एल. नागेश्वर राव, जे. और एस. रवींद्र भट, जे. की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने महसूस किया कि इस मामले पर बड़े पैमाने पर विचार किया जाना चाहिए। इस न्यायालय के समक्ष निर्धारण के लिए उठे महत्वपूर्ण मुद्दों एवं विद्वान एमीसी क्यूरी का यह कथन कि इस न्यायलय की कुछ न्यायिक घोषणओं की स्पष्टीकरण की आवश्यकता है, को ध्यान में रखते हुए मामले को बड़ी पीठ को संदर्भित किया गया है। हमने कुछ राज्यों के अधिवक्ता, विद्वान अमीसी क्यूरी, भारत के विद्वान सॉलिसिटर जनरल, श्री विक्रमजीत बनर्जी, भारत के विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल, श्री रमेश बाबू, भारतीय रिज़र्व बैंक के वकील और डॉ. ललित भसीन, भारतीय बैंक संघ के वकील को सुना।

3. अधिनियम में शामिल अध्याय XVII, जिसमें धारा 138 से 142 शामिल हैं, 01.04.1989 को लागू हुआ। धारा 138 के अनुसार धन की अपर्याप्तता के कारण चेक का अनादर होने पर एक वर्ष का कारावास या चेक की राशि के दोगुने तक का जुर्माना हो सकता है। धारा 139 धारक के पक्ष में इस धारणा से निपटती है कि प्राप्त चेक किसी भी ऋण या अन्य देनदारी पूर्ण या आंशिक रूप से निर्वहन के लिए था। अधिनियम की धारा 138 के तहत अभियोजन में जिस बचाव की अनुमति नहीं दी जा सकती वह धारा 140 द्वारा शासित होती है। धारा 141 कंपनियों द्वारा किए गए अपराधों से संबंधित है। धारा 142 ऐसी शर्तें बताती है जिसके तहत धारा 138 के तहत अपराधों का संज्ञान लिया जा सकता है। पिछले कुछ वर्षों में, अदालतें इसके तहत दायर की गई शिकायतों से भर गई है और अधिनियम की धारा 138 जिस पर उचित अवधि के भीतर निर्णय नहीं लिया जा सका और कई वर्षों तक लंबित रहा।

4. अधिनियम की धारा 138 के तहत दायर की गई शिकायतों की इस विशाल लंबित मामलों के कारण अन्य आपराधिक मामलों के निपटान पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। इस स्थिति को सुधारने की तत्काल आवश्यकता थी जिसे परक्राम्य लिखित (संशोधन और विविध प्रावधान) अधिनियम 2002 द्वारा संबोधित किया गया था। अधिनियम में धारा 143 से 147 शामिल की गई, जो 06.02.2003 को लागू हुई। अधिनियम की धारा 143 न्यायालय को आपराधिक प्रक्रिया संहिता 1973 (इसके बाद, संहिता) में निहित किसी भी बात के बावजूद अधिनियम की धारा 138 के तहत दायर शिकायतों की संक्षेप में सुनवाई करने का अधिकार देती है। धारा 143 की उपधारा (3) में कहा गया है कि शिकायत दर्ज होने की तारीख से छह महीने के भीतर मुकदमा

समाप्त करने का प्रयास किया जाना चाहिए। धारा 144 समन की तामील के तरीके से संबंधित है। धारा 145 में कहा गया है कि शिकायतकर्ता द्वारा हलफनामे पर दिए गए साक्ष्य को संहिता के तहत किसी भी जांच, परीक्षण या अन्य कार्यवाही में साक्ष्य के रूप में पढ़ा जा सकता है बैंक की वह पर्ची या मेमो जो यह दर्शाता हो कि चेक अनादरित हो गया है, धारा 146 के अनुसार प्रथम दृष्टया साक्ष्य माना जाता है। धारा 147 अधिनियम के तहत दंडनीय अपराधों को समझौता योग्य बनाती है। अधिनियम के तहत निर्धारित सजा को एक वर्ष से बढ़ाकर दो वर्ष कर दिया गया, साथ ही धारा 138 से 142 में अन्य संशोधन किए गए, जिनसे हम इस मामले में चिंतित नहीं है।

5. स्थिति में सुधार नहीं हुआ है क्योंकि अदालतें अधिनियम की धारा 138 के तहत लंबित शिकायतों की बड़ी संख्या से जूझ रही हैं। विद्वान एमीसी क्यूरी द्वारा प्रस्तुत प्रारंभिक रिपोर्ट से पता चलता है. कि 31.12.2019 तक, लंबित आपराधिक मामलों की कुल संख्या 2.31 करोड़ थी, जिनमें 35.16 लाख अधिनियम की धारा 138 से संबंधित थे। विद्वान एमीसी क्यूरी के अनुसार, मामलों के लंबित रहने का कारण यह है कि जहां हर साल शिकायतों की स्थापना में लगातार वृद्धि हो रही है, वहीं निपटान की दर शिकायतों की स्थापना की दर से मेल नहीं खाती है। अधिनियम की धारा 138 के तहत शिकायतों के निपटान में देरी उन कारणों से हुई है जिनसे हम इस क्रम में निपटेंगे।

6. विद्वान अमीसी क्यूरी ने राज्य सरकारों और केंद्र शासित प्रदेशों द्वारा दायर प्रतिक्रियाओं से सात प्रमुख मुद्दों की पहचान की जो इस प्रकार है:

क) सम्मन की सेवा

बी) संहिता की धारा 219 में वैधानिक संशोधन

ग) सारांश परीक्षण

घ) बैंक खातों की कुर्की

ड़) संहिता की धारा 202 की प्रयोज्यता

च) मध्यस्थता

(छ) मजिस्ट्रेट का अंतर्निहित क्षेत्राधिकार

7. अधिनियम की धारा 138 के तहत दायर शिकायत में अभियुक्तों पर समन की तामील शिकायतों के निपटान में देरी का एक मुख्य कारण रहा है। विभिन्न राज्य सरकारों और केंद्र शासित प्रदेशों की प्रतिक्रियाओं की जांच करने के बाद समन की सेवा में तेजी लाने के लिए विद्वान एमीसी क्यूरी द्वारा कई सुझाव दिए गए हैं। उनके द्वारा दिए गए कुछ सुझाव अधिनियम की धारा 146 के तहत बैंक द्वारा जारी किए गए अस्वीकृत पर्चियों चेक जारी करने वाले के वर्तमान मोबाइल नंबर, ईमेल पते और डाक पते का खुलासा करने, चेक लीफ पर जारीकर्ता का विवरण देने से संबंधित हैं। समन की इलेक्ट्रॉनिक सेवा के लिए एक नोडल एजेंसी का निर्माण और अनादर ज्ञापन से एक अद्वितीय नंबर तैयार करना। भारतीय संघ और भारतीय रिजर्व बैंक को इन पर विद्वान एमीसी क्यूरी द्वारा दिए गए सुझावों पर अपनी प्रतिक्रियाएँ प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया था। दिनांक 10.03.2021 को भारत के विद्वान सॉलिसिटर जनरल और भारतीय रिजर्व बैंक के विद्वान वकील श्री रमेश बाबू को सुनने के बाद इस न्यायालय द्वारा माननीय न्यायमूर्ति श्री आर.सी.चव्हाण, पूर्व न्यायाधीश, उच्च न्यायालय बॉम्बे के साथ न्यायिक फैसला की सूची के विस्फोट को रोकने के लिए दिए गए विभिन्न सुझावों पर विचार करने के लिए एक समिति बनाना उचित माना गया। चेक राशि की सीमा तक बैंक खातों की कुर्की, समन पूर्व मध्यस्थता और अन्य सभी मुद्दों से संबंधित विद्वान एमीसी क्यूरी द्वारा की गई सिफारिशें जो प्रारंभिक नोट का हिस्सा हैं और विद्वान एमीसी क्यूरी की लिखित प्रस्तुतियाँ पर विचार किया जाएगा। उपरोक्त समिति, अन्य संबंधित मुद्दों के अलावा जो इस तरह के विचार के दौरान उत्पन्न हो सकते हैं। समिति को अधिनियम की धारा 138 के तहत शिकायतों की सुनवाई के लिए अतिरिक्त अदालतों के निर्माण की आवश्यकता पर विचार-विमर्श करने का निर्देश दिया गया है।

<u>सारांश परीक्षण का समन परीक्षण में यांत्रिक रूपांतरण</u>

8. विद्वान एमीसी क्यूरी ने प्रस्तुत किया कि अधिनियम की धारा 143 में प्रावधान है कि संहिता की धारा 262 से 265 अधिनियम के अध्याय XVII के तहत सभी अपराधों के मुकदमे के लिए लागू होगी। दूसरा प्रावधान मजिस्ट्रेट को सारांश मुकदमे को समन मुकदमे में बदलने का अधिकार देता है, यदि उसकी राय है कि एक वर्ष से अधिक कारावास की सजा पारित करनी पड़ सकती है या मामले की संक्षिप्त सुनवाई करना अवांछनीय है तो कारण सिखाते हुए वह ऐसा करेगा। विद्वान अमीसी क्यूरी ने इस न्यायालय के ध्यान में लाया है कि सारांश

परीक्षणों को नियमित रूप से यांत्रिक तरीके से सम्मन परीक्षणों में परिवर्तित कर दिया जाता है। उनके द्वारा अपने प्रारंभिक नोट में दिए गए सुझाव कि उच्च न्यायालयों को सारांश मुकदमे को समन मुकदमे में बदलने से पहले ठोस और पर्याप्त कारण दर्ज करने के लिए विचारण न्यायालय को उच्च न्यायालयों द्वारा अभ्यास निर्देश जारी करना चाहिए।

9. अधिनियम की धारा 143 को वर्ष 2002 में अधिनियम की धारा 138 के तहत दायर शिकायतों के त्वरित निपटान के लिए एक कदम सहायता के रूप में पेश किया गया है। इस स्तर पर, संहिता के अध्याय XXI का संदर्भ लेना आवश्यक है जो सारांश परीक्षणों से संबंधित है। ऐसे मामले में, जिस पर संक्षेप में विचार किया गया है, जिसमें अभियुक्त दोषी नहीं मानता है, मजिस्ट्रेट के लिए साक्ष्य के सार को रिकॉर्ड करना और निर्णय देना पर्याप्त है, जिसमें उसके निष्कर्षों के कारणों का एक संक्षिप्त विवरण शामिल है। धारा 262 के तहत सारांश परीक्षण की प्रक्रिया पर प्रतिबंध हैं और तीन महीने से अधिक कारावास की किसी भी सजा के लिए लागू नहीं किया जाना चाहिए। हालाँकि संहिता की धारा 262 से 265 को अधिनियम के अध्याय XVII के तहत संहिता में किसी भी बात के बावजूद किसी अपराध के मुकदमे के लिए "जहाँ तक संभव हो" लागू किया गया था। केवल ऐसे मामले में जहां मजिस्ट्रेट की राय है कि आरोपी को एक वर्ष से अधिक की सजा देना आवश्यक हो सकता है, शिकायत को समन ट्रायल के रूप में चलाया जाएगा। विभिन्न उच्च न्यायालयों की प्रतिक्रियाओं से यह स्पष्ट है कि विचारण न्यायालय द्वारा धारा 138 के तहत शिकायतों को सारांश विचारण से समन विचारण में परिवर्तित करना बिना कारण दर्ज किए यंत्रवत् किया जा रहा है। धारा 138 के तहत शिकायतों को सारांश सुनवाई से समन सुनवाई में बदलने का परिणाम मामलों के निपटान में देरी में योगदान दे रहा है। इसके अलावा, धारा 143 के दूसरे प्रावधान में कहा गया है कि मजिस्ट्रेट को इस तरह के रूपांतरण के कारणों को बताते हुए एक आदेश दर्ज करना होगा। अधिनियम की धारा 143 का उद्देश्य, जहां तक संभव हो, संहिता के तहत सारांश परीक्षण के लिए निर्धारित प्रक्रिया का पालन करके धारा 138 के तहत शिकायतों का त्वरित निपटान करना है। धारा 143 के दूसरे परंतुक द्वारा सारांश परीक्षण से समन परीक्षण में परिवर्तन मजिस्ट्रेट को प्रदत्त विवेक का प्रयोग, परिवर्तन के कारणों को दर्ज करने के बाद, उचित देखभाल और सावधानी के साथ किया जाना चाहिए अन्यथा, जिस उद्देश्य के लिए अधिनियम की धारा 143 लागू की गई है वह उद्देश्य विफल हो जाएगा। हम उच्च न्यायालयों के परामर्श से विद्वान अमीसी क्यूरी द्वारा दिए गए

सुझावों को स्वीकार करते हैं। उच्च न्यायालय अधिनियम की धारा 143 के दूसरे प्रावधान के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए धारा 138 के तहत शिकायतों की सुनवाई को सारांश सुनवाई से समन सुनवाई में बदलने से पहले कारण अंकित करने के लिए मजिस्ट्रेटों को अभ्यास निर्देश जारी कर सकते हैं।

<u>अधिनियम की धारा 145 के संबंध में संहिता की धारा 202 के तहत जाँच</u>

10. संहिता की धारा 202 मजिस्ट्रेट को यह निर्णय लेने के उद्देश्य से जांच करने का अधिकार क्षेत्र प्रदान करती है कि क्या प्रक्रिया के मुद्दे को उचित ठहराने वाले पर्याप्त आधार बनाए गए हैं। 23.06.2006 से प्रभावी संहिता की धारा 2002 में संशोधन, 2005 के अधिनियम 25 के तहत, मजिस्ट्रेट के लिए प्रक्रिया जारी करने से पहले जांच करना अनिवार्य बना दिया गया, ऐसे मामले में जहां आरोपी न्यायालय के अधिकार क्षेत्र से बाहर रहता है। (देखें: ***विजय धानुका और अन्य बनाम नाजिमा ममताज और अन्य, अभिजीत पवार बनाम हेमंत मधुकर निंबालकर और अन्य और बिरला कोर्पोरेशन लिमिटेड बनाम एडवेंटज इन्वेस्टमेंट्स एंड होल्डिंग्स लिमिटेड एवं अन्य***)। अधिनियम की धारा 138 के तहत दायर शिकायतों के संबंध में धारा 202 की प्रयोज्यता के संबंध में उच्च न्यायालयों के बीच मतभेद रहा है। धारा 138 के तहत कुछ मामलों में उच्च न्यायालयों द्वारा इस दृष्टिकोण को बरकरार रखते हुए निर्णय लिया गया है कि धारा 138 के तहत दायर शिकायतों में प्रक्रिया जारी करने से पहले मजिस्ट्रेट के लिए जांच करना अनिवार्य है, जैसा कि संहिता की धारा 202 में प्रदान किया गया है। कुछ अन्य मामलों में विपरीत विचार व्यक्त किये गये हैं। यह माना गया है कि केवल इसलिए कि अभियुक्त अदालत के अधिकार क्षेत्र से बाहर रह रहा है, मजिस्ट्रेट के लिए प्रत्येक मामले में प्रक्रिया जारी करने को स्थगित करना आवश्यक नहीं है। इसके अलावा, यह भी माना गया है कि यदि अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री से अपेक्षित संतुष्टि पास की जा सकती है, तो संहिता की धारा 202 के तहत जांच नहीं करने से प्रक्रिया जारी करने में कोई बाधा नहीं आएगी।

11. विद्वान एमीसी क्यूरी ने ***कैएस जोसेफ बनाम फिलिप्स कार्बन ब्लैक लिमिटेड और अन्य*** में इस न्यायालय के एक फैसले का हवाला दिया, जहां जाँच की आवश्यकता के बारे में चर्चा हुई लेकिन कानून का प्रश्न खुला छोड़ दिया गया था। ***विजय धानुका*** (सुप्रा), ***अभिजीत पवार*** (सुप्रा) और ***बिरला कॉर्पोरेशन*** (सुप्रा) में इस न्यायालय के फैसलों के मद्देनजर, अदालत के अधिकार क्षेत्र से बाहर रहने वाले आरोपियों को समन जारी करने से पहले मजिस्ट्रेट द्वारा की

जाने वाली जांच को दूर नहीं किया जा सकता है। विद्वान अमीसी क्यूरी ने सिफारिश की कि मजिस्ट्रेट को जांच करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचना चाहिए कि आरोपी के खिलाफ आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त आधार है। हम विद्वान अमीसी से सहमत है।

12. एक अन्य बिंदु जो हमारे ध्यान में लाया गया है वह धारा 202 (2) की व्याख्या से संबंधित है जिसमें कहा गया है कि मजिस्ट्रेट प्रक्रिया जारी करने के उद्देश्य से धारा 202 (1) के तहत की गई जांच में शपथ पर गवाह का साक्ष्य लेगा। अधिनियम की धारा 145 में प्रावधान है कि शिकायतकर्ता का साक्ष्य हलफनामे पर दिया जा सकता है, जिसे संहिता में निहित किसी भी बात के बावजूद, किसी भी जांच, परीक्षण या अन्य कार्यवाही में साक्ष्य के रूप में पढ़ा जाएगा। अधिनियम की धारा 145 (2) अदालत को तथ्यों के बारे में शपथ पत्र पर साक्ष्य देने वाले किसी भी व्यक्ति को अभियोजन पक्ष या अभियुक्त के आवेदन पर बुलाने और जांच करने में सक्षम बनाती है। विद्वान एमीसी क्यूरी द्वारा यह तर्क दिया गया है कि यद्यपि हलफनामे पर गवाहों की जांच की अनुमति देने वाला कोई विशिष्ट प्रावधान नहीं है, धारा 145 धारा 202 के तहत जांच के उद्देश्य से शिकायतकर्ता को हलफनामे के माध्यम से जांच करने की अनुमति देती है। उन्होंने सुझाव दिया कि धारा 202 (2) को धारा 145 के साथ पढ़ा जाना चाहिए और धारा 138 के तहत शिकायतों के संबंध में शपथ पत्र पर गवाहों की जांच की भी अनुमति दी जानी चाहिए। केवल असाधारण मामलों में मजिस्ट्रेट गवाहों से व्यक्तिगत रूप से पूछताछ कर सकता है। अधिनियम की धारा 145 एक हलफनामे के माध्यम से शिकायतकर्ता की जांच के संबंध में धारा 202 का अपवाद है। धारा 145 में शपथ पत्र पर गवाहों की जांच के संबंध में भी कोई विशेष प्रावधान नहीं है। यह स्पष्ट हो जाता है कि धारा 138 के तहत दायर शिकायतों में मुकदमे में तेजी लाने के प्रशंसनीय उद्देश्य के साथ वर्ष 2003 से धारा 145 को अधिनियम में शामिल किया गया था। यदि शिकायतकर्ता का साक्ष्य शपथ पत्र पर दिया जा सकता है, तो गवाहों के साक्ष्य को शपथ पर लेने पर जोर देने का कोई कारण नहीं है। धारा 202 के साथ धारा 145 के समग्र अध्ययन पर हम मानते हैं कि संहिता की धारा 202 (2) के संबंध में धारा 138 के तहत शिकायतों पर लागू नहीं होती है। शिकायतकर्ता की ओर से गवाहों की गवाही शपथ पत्र पर दी जाएगी। यदि मजिस्ट्रेट स्वयं जांच करता है, तो यह अनिवार्य नहीं है कि वह गवाहों की जांच करे। उपयुक्त मामलों में, मजिस्ट्रेट कार्यवाही के लिए आधारों की पर्याप्तता के बारे में संतुष्टि के लिए दस्तावेजों की जांच कर सकता है।

संहिता की धारा 219 और 220

13. संहिता की धारा 219 में प्रावधान है कि जब किसी व्यक्ति पर 12 महीने के भीतर किए गए एक ही प्रकार के एक से अधिक अपराधों का आरोप लगाया जाता है तो उस पर अधिकतम तीन ऐसे अपराधों के लिए एक मुकदमे में मुकदमा चलाया जा सकता है। धारा के अनुसार, यदि एक ही व्यक्ति द्वारा कार्यों की एक श्रृंखला में एक से अधिक अपराध किए जाते हैं, जिससे एक ही लेनदेन बनता है, तो उस पर आरोप लगाया जा सकता है और एक ही मुकदमे में मुकदमा चलाया जा सकता है। धारा 220 के सम्बन्ध में अपनी प्रारंभिक रिपोर्ट में विद्वान एमीसी क्यूरी ने सुझाव दिया कि जहां एक ही उद्देश्य के लिए चेक जारी किए गए हैं, वहां कार्यवाही की बहुलता से बचने के लिए संहिता की धारा 219 में एक विधायी संशोधन की आवश्यकता है। जहां तक संहिता की धारा 220 का संबंध है, विद्वान अभीसी क्यूरी ने प्रस्तुत किया कि कृत्यों की एक श्रृंखला में एक ही लेनदेन के हिस्से के रूप में वही समान अपराध की विषय वस्तु हो सकते हैं। विद्वान एमीसी क्यूरी द्वारा यह तर्क दिया गया कि संहिता की धारा 220 (1) धारा 219 द्वारा नियंत्रित नहीं है और भले ही एक ही लेनदेन के संबंध में अपराध तीन से अधिक हो, तो संयुक्त परीक्षण हो सकता है। ***बलबीर बनाम हरियाणा राज्य एवं अन्य*** में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा करते हुए तर्क दिया गया कि एक ही लेन-देन के हिस्से के रूप में आरोपी द्वारा किए गए सभी अपराधों को एक ही मुकदमे में एक साथ आजमाया जा सकता है, भले ही हो सकता है कि वे अपराध किसी बड़ी साजिश के हिस्से के रूप में किए गए हों।

14. विद्वान एमीसी क्यूरी ने बताया कि ***वाणी एग्रो एंटरप्राइजेज बनाम गुजरात राज्य और अन्य*** में इस न्यायालय के फैसले की स्पष्टीकरण की आवश्यकता है। ***वाणी एग्रो*** (सुप्रा) में, यह न्यायालय चार चेकों के अनादर से निपट रहा था जो चार शिकायतों का विषय था उसमें उठाया गया प्रश्न सभी चार मामलों के एकीकरण से संबंधित था। चूंकि संहिता की धारा 219 के अनुसार केवल तीन मामलों की एक साथ सुनवाई की जा सकती है, इस न्यायालय ने विचारण न्यायालय को सभी चार मामलों को एक ही तारीख पर तय करने का निर्देश दिया। ***वाणी एग्रो*** (सुप्रा) में इस न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण संहिता की धारा 219 के आदेश के मद्देनजर उचित है। इसलिए किसी भी स्पष्टीकरण की आवश्यकता नहीं है, विशेष रूप से विद्वान अमीसी द्वारा किए गए निवेदन कि धारा 219 में उपयुक्त संशोधन किया जाए। हमें विद्वान एमीसी क्यूरी के इस कथन में बल मिलता है कि धारा 138 के तहत शिकायतों के संबंध में 12 महीने

के भीतर एक ही तरह के तीन से अधिक अपराधों के लिए एक मुकदमा केवल एक संशोधन द्वारा ही हो सकता है। आपराधिक अदालतों के बोझ को कम करने के लिए, हम अनुशंसा करते हैं कि अधिनियम में एक प्रावधान किया जाए कि किसी व्यक्ति पर धारा 138 के तहत एक ही तरह के अपराधों के लिए 12 महीने के भीतर एक ही मुकदमे में मुकदमा संहिता की धारा 219 में प्रतिबंध के बावजूद भी चलाया जा सके।

15. एक ही लेनदेन के हिस्से के रूप में किए गए अपराधों पर संहिता की धारा 220 के अनुसार संयुक्त रूप से मुकदमा चलाया जा सकता है। संहिता में कहीं भी "समान लेनदेन" का क्या मतलब हैं. इसे परिभाषित नहीं किया गया है। दरअसल, यह परिभाषित करना हमेशा मुश्किल होगा कि अभिव्यक्ति का क्या मतलब है किसी लेन-देन को समान माना जा सकता है या नहीं, यह आवश्यक रूप से प्रत्येक मामले के विशेष तथ्यों पर निर्भर करेगा और हमें लगता है कि जिसे विधायिका ने जानबूझकर अपरिभाषित छोड़ दिया है, उसकी परिभाषा बनाना एक कठिन कार्य है। हमने किसी भी अदालत का एक भी ऐसा निर्णय नहीं देखा है जिसने अभिव्यक्ति को परिभाषित करने का कठिन कार्य शुरू किया हो। लेकिन आम तौर पर यह होता है कि जहां कार्यों की श्रृंखला के संबंध में समय या स्थान की निकटता या उद्देश्य और डिजाइन की एकता या कार्रवाई की निरंतरता है, तो यह अनुमान लगाना संभव हो सकता है कि वे एक ही लेनदेन का हिस्सा हैं। हालाँकि, यह आवश्यक नहीं है कि किसी लेन-देन को समान मानने के लिए इनमें से प्रत्येक तत्व सह-अस्तित्व में हो लेकिन यदि किसी व्यक्ति द्वारा किए गए कई कार्य उद्देश्य या डिजाइन की एकता दिखाते हैं तो यह इंगित करने के लिए एक मजबूत परिस्थिति होगी कि वे कार्य एक ही लेनदेन का हिस्सा है। धारा 220 में कोई अस्पष्टता नहीं है जिसके अनुसार एक ही लेनदेन के हिस्से के रूप में जारी किए गए कई चेक एक परीक्षण का विषय हो सकते हैं।

16. विद्वान अमीसी क्यूरी ने हमारे संज्ञान में लाया है कि एक ही लेनदेन के हिस्से वाले चेक के अनादरण के लिए अधिनियम की धारा 138 के तहत अलग-अलग शिकायतें दर्ज की जाती हैं। समन की तामिल में अनुचित देरी अदालतों के समक्ष धारा 138 के तहत शिकायतों के अनुपातहीन संचय का मुख्य कारण है। विद्वान एमीसी ने सुझाव दिया कि समन की सेवा में लगने वाले समय को कम करने का एक तरीका लेनदेन से संबंधित एक शिकायत में दिए गए समन की सेवा को उक्त लेनदेन के संबंध में सभी शिकायतों के लिए मानी गई सेवा के रूप में मानना है। हम विद्वान एमीसी क्यूरी द्वारा दिये गये सुझाव से सहमत हैं। तदनुसार, उच्च

न्यायालयों से अनुरोध किया जाता है कि वे विचारण न्यायालयों को लेन-देन का हिस्सा बनने वाली एक शिकायत में समन की सेवा को जारी किए गए चेक के अनादर से संबंधित एक ही अदालत के समक्ष दायर सभी शिकायतों के संबंध में सेवा के रूप में उक्त लेन-देन का हिस्सा मानने के लिए अभ्यास निर्देश जारी करें।

मजिस्ट्रेट की अंतर्निहित शक्तियों

17. ***के.एम. मैथ्यू बनाम केरल राज्य एवं अन्य*** में इस न्यायालय ने संहिता की धारा 204 के तहत जारी सम्मन के जवाब में आरोपी के उपस्थित होने के बाद संहिता के अध्याय XX के तहत मजिस्ट्रेट की शक्ति पर विचार किया। यह माना गया कि आरोपी मजिस्ट्रेट के समक्ष दलील दे सकता है कि उसके खिलाफ प्रक्रिया जारी नहीं की जानी चाहिए थी और यदि मजिस्ट्रेट शिकायत पर पुनर्विचार करने पर संतुष्ट हो जाता हैं कि ऐसा कोई अपराध नहीं हैं जिसके लिए आरोपी पर मुकदमा चलाया जा सके तो वह कार्यवाही बंद कर सकता है। इस न्यायालय की राय थी कि मजिस्ट्रेट को कार्यवाही बंद करने के लिए किसी विशिष्ट प्रावधान की आवश्यकता नहीं है और चूंकि प्रक्रिया जारी करने का आदेश एक अंतरिम आदेश है, न कि कोई निर्णय, इसलिए इसमें बदलाव किया जा सकता है या वापस लिया जा सकता है। ***के.एम. मैथ्यू*** (सुप्रा) के मामले में प्रक्रिया निर्गत करने के एक गलत आदेश की वापसी के लिए कानून के किसी विशिष्ट प्रावधान की आवश्यकता नहीं है। ***अदालत प्रसाद बनाम रूपलाल जिंदल और अन्य*** में प्रक्रिया जारी करने के एक गलत आदेश को संहिता की योजना के विपरीत माना गया था। उसमें यह देखा गया कि संज्ञान लेने का आदेश केवल संहिता की धारा 482 के तहत कार्यवाही का विषय हो सकता है क्योंकि अधीनस्थ आपराधिक अदालतों के पास कोई अंतर्निहित शक्ति नहीं है। संहिता द्वारा विचारण न्यायालय को समीक्षा की कोई शक्ति भी प्रदान नहीं की गई है। चूंकि विचारण न्यायालय द्वारा किसी गलत आदेश को वापस लेने के लिए कोई विशेष प्रावधान नहीं है, इसलिए ***के.एम. मैथ्यू*** (सुप्रा) के मामले में फैसले को सही कानून नहीं बनाने वाला माना गया। इस सवाल पर कि क्या कोई व्यक्ति समन मामले में आरोपमुक्ति की मांग कर सकता है, इस न्यायालय ने ***सुब्रमण्यम सेथुरमन बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य*** में विचार किया था जिसमें ***अदालत प्रसाद*** (सुपा) में निर्धारित कानून को दोहराया गया।

18. विद्वान अमीसी क्यूरी द्वारा यह तर्क दिया गया था कि अधिनियम की धारा 143 के साथ-साथ संहिता की धारा 251 और 258 का समग्र अध्ययन विचारण न्यायालय द्वारा

प्रक्रिया जारी करने की समीक्षा या वापस लेने की शक्ति प्रदान करने के लिए अधिनियम की धारा 138 के तहत दायर शिकायतों के संबंध में माना जाना चाहिए। उन्होंने ***मीटर्स और इंस्ट्रूमेंट्स प्राइवेट लिमिटेड और अन्य बनाम कंचन मेहता*** में इस न्यायालय के एक फैसले का हवाला दिया है जो इस प्रकार है:

"जबकि यह सच है कि सुब्रमण्यम सेथुरमन बनाम महाराष्ट्र राज्य में यह न्यायालय द्वारा अवधारित किया गया है कि एक बार अभियुक्त की याचिका सीआरपीसी की धारा 252 के तहत दर्ज हो जाने के बाद मुकदमे को उसके तार्किक निष्कर्ष तक ले जाने के लिए अध्याय XX सीआरपीसी के तहत विचार की गई प्रक्रिया का पालन किया जाना चाहिए, उक्त निर्णय 2002 के संशोधन से पहले वैधानिक प्रावधानों के अनुसार दिया गया था। 2002 के बाद की वैधानिक योजना में संशोधन जैसा कि मांडवी कूप में विचार किया गया। बैंक और जे.वी. बहारूनी ने कानून में बदलाव किया है और इसे मान्यता देने की जरूरत है। 2002 के संशोधन के बाद, अधिनियम की धारा 143 मजिस्ट्रेट को आरोपी को आरोप मुक्त करने की निहित शक्ति प्रदान करती है यदि शिकायतकर्ता को अदालत की संतुष्टि के अनुसार मुआवजा दिया जाता है, जहां आरोपी चेक राशि के साथ ब्याज और मुकदमेबाजी की उचित लागत का आकलन करता है और उसे अदालत द्वारा निर्धारित किया गया है। ऐसी व्याख्या विधायिका की मंशा के अनुरूप थी। अदालत को शिकायतकर्ता और अभियुक्त के अधिकारों को संतुलित करना है और न्याय तक पहुंच भी बढ़ानी है। कानून का मूल उद्देश्य चेक जारीकर्ता को दंडित करने के इरादे के बिना शिकायतकर्ता को त्वरित उपचार प्रदान करके चेक लेनदेन की विश्वसनीयता बढ़ाना है, जिसका आचरण उचित है या जहां शिकायतकर्ता को मुआवजा न्याय के उद्देश्य से मिलता है। अधिनियम की धारा 143 के तहत अपनी अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग करके न्यायालय द्वारा उचित आदेश पारित किया जा सकता है जो पक्षकारों की सहमति से समझौते से अलग है। इस प्रकार धारा 258 सीआरपीसी जो समन मामले में कार्यवाही को रोकने में सक्षम बनाती है, भले ही सख्ती से कहे तो शिकायत मामलों पर लागू नहीं होती है, क्योंकि सीआरपीसी के प्रावधान "जहाँ तक संभव हो" लागू होते हैं, उक्त प्रावधान का सिद्धांत लागू होता है अधिनियम की धारा 143 के अंतर्गत आने वाले एक शिकायत मामले में, जहां तक संभव हो सके सारांश परीक्षण प्रावधानों की प्रयोज्यता पर विचार किया जाता है, अर्थात ऐसे विचलन के साथ जो संदर्भ में त्वरित सुनवाई के लिए आवश्यक हो सकता है।"

19. ***मीटर्स एंड इंस्ट्रूमेंट्स*** (सुप्रा) में, इस न्यायालय की राय थी कि अधिनियम की धारा 143 मजिस्ट्रेट को आरोपी को आरोप मुक्त करने की निहित शक्ति प्रदान करती है, यदि शिकायतकर्ता को अदालत की संतुष्टि के अनुसार मुआवजा दिया जाता है उस सादृश्य पर यह माना गया कि पक्षों की सहमति से समझौता करने के अलावा, विचारण न्यायालय के पास अपनी अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग करते हुए धारा 143 के तहत उचित आदेश पारित करने का अधिकार क्षेत्र है। इस न्यायालय द्वारा विचारण न्यायालय को उपयुक्त आदेश पारित करने का अधिकार देने के लिए संहिता की धारा 258 पर भरोसा रखा गया था।

20. अधिनियम की धारा 143 में कहा गया है कि संहिता के सारांश परीक्षण के प्रावधान धारा 138 के तहत शिकायतों के परीक्षण पर जहाँ तक संभव हो लागू होंगे। संहिता की धारा 258 मजिस्ट्रेट को लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों के आधार पर किसी भी स्तर पर कार्यवाही रोकने और शिकायत के अलावा किसी अन्य सम्मन मामले में बरी करने का निर्णय सुनाने का अधिकार देती है। संहिता की धारा 258 किसी शिकायत पर शुरू किए गए समन मामले पर लागू नहीं होती है। इसलिए, अधिनियम की धारा 138 के तहत दायर शिकायतों के संबंध में धारा 258 लागू नहीं हो सकती है। ***मीटर्स एंड इंस्ट्रूमेंट्स*** (सुप्रा) में इस न्यायालय के फैसले ने विचारण न्यायालय को किसी आरोपी को बरी करने का अधिकार को अच्छा कानून नहीं माना है। अधिनियम की धारा 143 में "जहाँ तक हो सके शब्दों से लिया गया समर्थन अनुचित है। धारा 143 में "जहाँ तक हो सके शब्द का उपयोग केवल संहिता की धारा 262 से 265 की प्रयोज्यता और अध्याय XVII के तहत परीक्षणों के लिए पालन की जाने वाली सारांश प्रक्रिया के संबंध में किया जाता है। कुछ शब्दों को प्रावधानों में पढ़कर न्यायालय को शक्ति प्रदान करना अस्वीकार्य है। किसी न्यायाधीश को किसी कानून को दोबारा नहीं लिखना चाहिए न तो उसे बढ़ाना चाहिए और न ही उसे अनुबंधित करना चाहिए। नीति-निर्माण की राज्य-कौशल बुद्धिमानी से चाहे जो भी सुझाए, निर्माण को प्रक्षेप और निष्कासन से बचना चाहिए। उसे सृजन के तरीके से नहीं पढ़ना चाहिए। न्यायाधीश का कर्तव्य कानून की व्याख्या करना और लागू करना है, न कि न्यायाधीश के विचार को पूरा करने के लिए इसे बदलना कि न्याय की क्या आवश्यकता है। अदालत किसी कानून में शब्द नहीं जोड़ सकती है या उसमें वह शब्द नहीं पढ़ सकती है जो वहां नहीं है।

21. ***अदालत प्रसाद*** (सुप्रा) और ***सुब्रमण्यम सेथुरमन*** (सुप्रा) में इस न्यायालय के निर्णयों की बारीकी से जांच से पता चलेगा कि वे किसी भी पुनर्विचार की आवश्यकता नहीं रखते हैं। विचारण न्यायालय को प्रक्रिया जारी करने के आदेश की समीक्षा करने या वापस लेने की अंतर्निहित शक्ति नहीं दी जा सकती है। जैसा कि उपरोक्त, इस न्यायालय ने धारा 138 के तहत शिकायतों के निपटान में देरी को कम करने की चिंता में धारा 258 को यह मानने के लिए लागू किया है कि विचारण न्यायालय के पास मुआवजे के भुगतान के अलावा अन्य कारणों से भी आरोपी को आरोपमुक्त करने की शक्ति है। हालांकि, विचारण न्यायालय को समन पर पुनर्विचार/वापस लेने का अधिकार देने वाले अधिनियम में संशोधन पर इस न्यायालय द्वारा गठित समिति की सिफारिश पर विचार किया जा सकता है जो इस पहलू पर भी गौर करेगी।

22. विद्वान एमीसी क्यूरी द्वारा दिया गया एक अन्य निवेदन संहिता की धारा 322 के तहत मजिस्ट्रेट की शक्ति से संबंधित है, यदि उसके पास मामले की सुनवाई करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं हैं, तो प्रक्रिया जारी करने के आदेश पर फिर से विचार किया जा सकता है। हम विद्वान एमीसी क्यूरी से सहमत हैं कि यदि विचारण न्यायालय को सूचित किया जाता है कि उसके पास अधिनियम की धारा 138 के तहत शिकायतों के लिए प्रक्रिया जारी करने का अधिकार क्षेत्र नहीं है, तो कार्यवाही रोक दी जाएगी और मामला मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट या ऐसे अन्य मजिस्ट्रेट जिनके पास क्षेत्राधिकार है, को प्रस्तुत किया जायेगा।

23. यद्यपि हमने अन्य सभी मुद्दों को, जिन पर निर्णय नहीं लिया गया है, इस न्यायालय द्वारा 10.03.2021 को नियुक्त समिति को भेज दिया है, अपीलीय न्यायालयों, इस न्यायालय और उच्च न्यायालयों में लंबित धारा 138 के तहत शिकायतों से निपटना आवश्यक है। हमें विद्वान एमीसी क्यूरी द्वारा सूचित किया गया है कि अपीलीय स्तर में इस न्यायालय और उच्च न्यायालयों के समक्ष लंबित मामलों को मध्यस्थता के माध्यम से निपटाया जा सकता है। हम उच्च न्यायालयों से अनुरोध करते हैं कि वे अधिनियम की धारा 138 के तहत दायर शिकायतों से उत्पन्न लंबित पुनरीक्षण मामले की पहचान करें और उन्हें जल्द से जल्द मध्यस्थता के लिए संदर्भित करें। जिन न्यायालयों के समक्ष अधिनियम की धारा 138 के तहत शिकायतों में निर्णयों के खिलाफ अपील लंबित है, उन्हें मध्यस्थता के माध्यम से विवादों को निपटाने का प्रयास करने का निर्देश दिया जाना चाहिए।

24. उपरोक्त चर्चा का परिणाम हमें निम्नलिखित निष्कर्ष पर ले जाता है:-

1) उच्च न्यायालयों से अनुरोध है कि अधिनियम की धारा 138 के तहत शिकायतों की सुनवाई को सारांश सुनवाई से समन सुनवाई में बदलने से पहले कारण दर्ज करने के लिए मजिस्ट्रेटों को अभ्यास निर्देश जारी करें।

(2) आरोपी के खिलाफ आगे बढ़ने के लिए एवं पर्याप्त आधार पर पहुंचने के लिए अधिनियम की धारा 138 के तहत शिकायत प्राप्त होने पर जांच की जाएगी, जब ऐसा आरोपी अदालत के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र से बाहर रहता है।

3) संहिता की धारा 202 के तहत जांच के संचालन के लिए शिकायतकर्ता की ओर से गवाहों के साक्ष्य को शपथ पत्र पर लेने की अनुमति दी जाएगी। उपयुक्त मामलों में, मजिस्ट्रेट गवाहों की जांच पर जोर दिए बिना जांच को दस्तावेजों की जांच तक सीमित कर सकता है।

4) हम अनुशंसा करते हैं कि संहिता की धारा 219 में प्रतिबंध के बावजूद, 12 महीने की अवधि के भीतर किए गए अधिनियम की धारा 138 के तहत एक व्यक्ति के खिलाफ कई अपराधों के लिए एक मुकदमे के प्रावधान के लिए अधिनियम में उपयुक्त संशोधन किए जाएं।

5) उच्च न्यायालयों से अनुरोध है कि वे धारा 138 के तहत एक शिकायत में समन की सेवा को लेन-देन का हिस्सा मानने के लिए विचारण न्यायालय को अभ्यास निर्देश जारी करें, जो कि चेकों के अनादर से संबंधित एक ही अदालत के समक्ष दायर सभी शिकायतों के संबंध में उक्त लेनदेन के हिस्से के रूप में सेवा मानी जाय।

6) ***अदालत प्रसाद*** (सुप्रा) और ***सुब्रमण्यम सेथुरमन*** (सुप्रा) में इस न्यायालय के निर्णयों की कानून की व्याख्या को सही ढंग से लागू करें और हम दोहराते हैं कि समन के मुद्दे की समीक्षा करने या वापस लेने की विचारण न्यायालय की कोई अंतर्निहित शक्ति नहीं है। इससे संहिता की धारा 322 के तहत विचारण न्यायालय की प्रक्रिया जारी करने के आदेश पर दोबारा विचार करने की शक्ति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है, यदि यह अदालत के ध्यान में लाया जाता है कि उसके पास शिकायत की सुनवाई करने का अधिकार क्षेत्र नहीं है।

7) संहिता की धारा 258 अधिनियम की धारा 138 के तहत शिकायतों पर लागू नहीं होती है और ***मीटर्स एंड इंस्ट्रूमेंट्स*** (सुप्रा) में इसके विपरीत निष्कर्ष सही कानून नहीं

बनाते हैं। इस पहलू से निर्णायक रूप से निपटने के लिए धारा 138 के तहत शिकायतों के संबंध में विचारण न्यायालय को पुनर्विचार/वापसी करने का अधिकार देने वाले अधिनियम में संशोधन पर इस न्यायालय के दिनांक 10.03.2021 के आदेश द्वारा गठित समिति द्वारा विचार किया जाएगा।

8) अन्य सभी बिंदु, जो एमीसी क्यूरी द्वारा अपनी प्रारंभिक रिपोर्ट और लिखित प्रस्तुतिकरण में उठाए गए हैं और यहां विचार नहीं किया गया है, उपरोक्त समिति द्वारा विचार-विमर्श का विषय होगा। अधिनियम की धारा 138 के तहत शिकायतों के शीघ्रता से निपटान संबंधित कोई अन्य मुद्दा पर भी समिति द्वारा विचार किया जाएगा।

25. मामले को आठ सप्ताह बाद सूचीबद्ध करें। इस मामले में आगे की सुनवाई 3 जजों की बेंच के सामने होगी।

26. हम एमीसी क्यूरी के रूप में विद्वान वरिष्ठ वकील श्री सिद्धार्थ लूथरा और विद्वान वकील श्री के.परमेश्वर द्वारा प्रदान की गई बहुमूल्य सहायता के लिए अपनी सराहना दर्ज करते हैं।

गोपाल पाण्डेय